जन्म शताब्दी पुस्तकमाला- ७४

विश्ववारा देव संस्कृति

(प्रवचन)

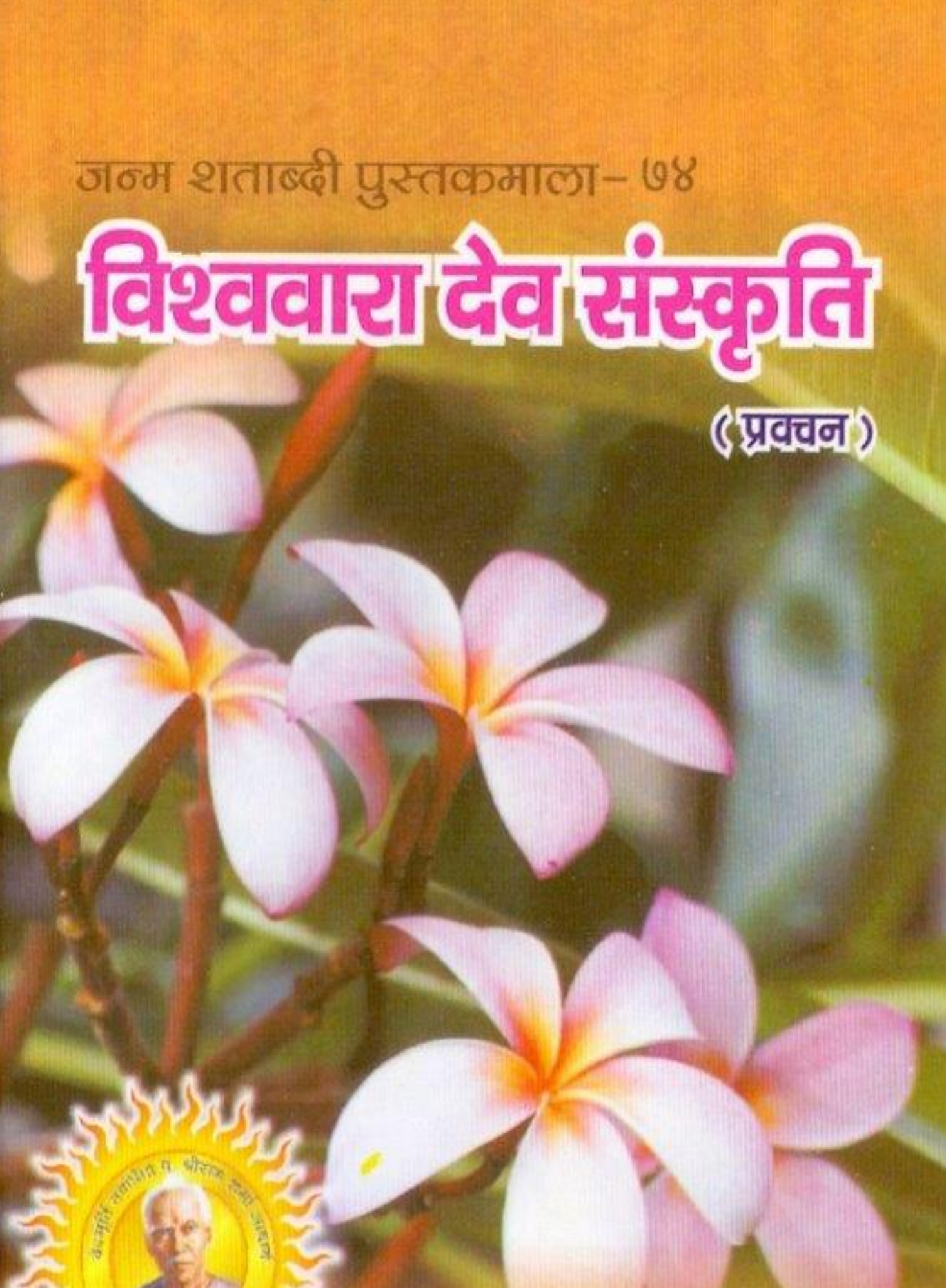

विश्ववारा देव संस्कृति

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

बेटे, हमने तप किया है और तप करके पाया है और तू हिस्सा माँगता है। चल तुझे भी दे देंगे । यह क्या है? छोटी चीज है, रत्तीभर चीज है। न इसमें किसी को घमंड करने की जरूरत है और न सफलता प्राप्त करने की जरूरत है। हमने अध्यात्म से यह पा लिया, वह पा लिया। बेटे, पाने से अध्यात्म का कोई संबंध नहीं है। अध्यात्म का संबंध है, देने से। आपने क्या दिया, बताइए? बस, यही एक सवाल है। अगर आप यह कहते हैं कि हम भगवान की भक्ति से कोई ताल्लुक रखते हैं, तो आप यह जवाब दीजिए कि दैवीय सभ्यता के लिए, श्रेष्ठ आचरणों के लिए, लोगों के सामने अच्छी परंपरा स्थापित करने के लिए आपने क्या दिया? यही एक

जवाब दीजिए और दूसरा हम कुछ नहीं सुनना चाहते। हमने इतना भजन किया। तो ठीक है अपने भजन को डिब्बी में रखिए। भजन का या किसी और का हवाला देना हम नहीं सुनना चाहते। गायत्री मंत्र की ग्यारह कापी हमने लिखीं। तो आप अपनी ग्यारह कापी ताले में बंद कर दीजिए। हमें मत बताइए। हमको तो यह बताइए कि आपने दैवीय सभ्यता के लिए कितना त्याग किया है ? कितना बलिदान किया है ? कितनी सेवा की है ?

मित्रो ! अध्यात्म की प्राचीन परंपराएँ, शालीन परंपराएँ, महान परंपराएँ भगवान को अपनी ओर खींचती हैं और खींचने के अलावा दूसरों की सहायता करने में समर्थ होती हैं। ऐसा कोई अध्यात्म नहीं है, जो मनोकामना को पूरा कराता हो। अध्यात्म वह है, जिससे आदमी अपना कल्याण करते हैं और दूसरों का कल्याण करने में समर्थ होते हैं। ऐसी शक्ति, जो दूसरों का कल्याण करती है, वह केवल असली अध्यात्म में रहती है। वह त्याग किए बिना, बलिदान

किए बिना, सेवाधर्म किए बिना, दैवीय सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप जीवन ढाले बिना किसी में नहीं आ सकती। न आई है और न आएगी। कौन सी? जिसमें त्याग जुड़ा हुआ न हो, सेवा जुड़ी हुई न हो, लोकहित जुड़ा हुआ न हो, कष्ट सहने की बात जुड़ी हुई न हो, उसमें अध्यात्म कैसे हो सकता है? नहीं बेटे! इससे कम में कभी अध्यात्म न था और न कभी होगा।

मित्रो! भगवान श्रीकृष्ण ने उस जमाने में, दुर्योधन के जमाने में जब चारों ओर असभ्यता और अनीति फैली पड़ी थी, तब यही नमूना पेश किया था। उनके पाँच हितैषी और हिमायती थे। पाँचों हिमायतियों का मैं एक नमूना बता रहा था। पाँचों पांडवों से कुंती ने कहा, बच्चो! तुममें से एक को वहाँ जाना चाहिए। बच्चे उछलने लगे और कहने लगे कि यह सौभाग्य तो हमको मिलना चाहिए। प्रतिस्पर्द्धा-कॉम्पिटीशन शुरू हो गई कि बलिदान में हम आगे जाएँगे। पाँचों बच्चों में प्रतिस्पर्द्धा शुरू

हो गई। कुंती के लिए जद्दोजहद खड़ी हो गई। युधिष्ठिर कहते कि हम सबसे बड़े हैं। हम दुनिया में सबसे पहले आए थे, इसलिए हमारा नंबर पहला है। सबसे छोटे वाले नकुल कहने लगे कि हम सबसे छोटे हैं, इसलिए हमको जाना चाहिए। अर्जुन कहने लगे कि इसके लिए हमको जाना चाहिए। सबमें झगड़ा होने लगा। कुंती ने कहा, अच्छा तुममें से कौन सबसे भाग्यवान है, इसके लिए मैं गोली बनाकर निकालती हूँ। पाँचों पांडवों के नाम से गोली बनाकर डाल दी गई और कहा गया कि अच्छा, एक गोली उठा लो। जिसका नाम आ जाएगा, उसी को जाना चाहिए।

गोली उठाई गई। भीम का नाम आ गया। भीम उछलने लगे, ओ हो! यह मेरा सौभाग्य है। मित्रो! सौभाग्य किसे कहते हैं? नौकरी में तरक्की हो जाने को? लॉटरी में रुपया निकल आने को? तीन बेटियों के बाद दो बेटा हो जाने को? आपकी दृष्टि में इसके अतिरिक्त और कोई सौभाग्य होता है

क्या? नहीं होता। बेटे! यह सौभाग्य नहीं होता। सौभाग्य वह होता है, जिसमें आदमी अजर-अमर हो जाता है। बेटे! सौभाग्य वह होता है, जिसमें हजारों-लाखों आदमी श्रद्धा के सुमन चढ़ाते रहते हैं और उसके चरणों पर आँसू बहाते रहते हैं और जिसके मरने के बाद भी आदमी उससे प्रकाश-प्रेरणा ग्रहण करते रहते हैं, रोशनी ग्रहण करते रहते हैं। देवता उन्हें ही कहते हैं, सौभाग्य उसे कहते हैं। सौभाग्यशाली वे हैं, वंदनीय वे हैं, जिन्होंने अपना आचरण इस तरीके से पेश किया कि जिससे प्रेरित होकर हजारों आदमी नमूने पेश करते रहें और दिशा प्राप्त करते रहें।

मित्रो! ऐसा ही हुआ। भीम का नंबर आ गया। भीम बच्चा था और राक्षस नौजवान। राक्षस कितना बड़ा था? समझ लीजिए छत के बराबर रहा होगा। और भीम? छोटा सा ही था। भीम लड़ने के लिए चला गया। महाभारत की कथा के अनुसार मैंने सुना है कि भीम ने कहा, अच्छा, आप हमको खाएँगे

तो हो ही, तो क्यों न पहले दो-दो हाथ कर देख लें। राक्षस ने कहा, चल, इसमें कोई ऐतराज नहीं है हमको। आ, हो जाएँ दो-दो हाथ। भीम लड़ने के लिए खड़ा हो गया और उसने राक्षस को पटककर मार दिया।

क्यों साहब! ऐसा हो सकता है? हाँ बेटे, ऐसा हो सकता है। सत्य हजार हाथी के बराबर बलवान होता है। बच्चों ने भी सत्य का आश्रय लेकर बड़ी-बड़ी सफलताएँ पाई हैं। कौन-कौन ने पाई हैं? चंद बच्चों के नाम बता सकता हूँ। कंस से लड़ने के लिए श्रीकृष्ण भगवान गए थे। तब वे कितने छोटे थे। बच्चा जब लड़ने के लिए गया तो कंस को, चाणूर को और बकासुर को मार डाला, किस-किस को मारा? हाथियों को, कालिया को मार डाला, कैसे मार डाला बच्चे ने? बेटे, बच्चे ने नहीं, सत्य ने मार डाला। सत्य के पास हजार हाथियों के बराबर बल होता है। भगवान श्रीकृष्ण चाहते तो और भी निन्यानवे हाथियों को मार सकते थे, क्योंकि उनके पास सत्य

था। बच्चा हो तो क्या, बड़ा हो तो क्या, जिसके पास सत्य है, विजय उसकी ही होती है।

मित्रो! महाभारत की कथाएँ भी इसी तरह की मालूम पड़ती हैं, जिसमें लोगों ने देवत्व पैदा किया। देवत्व का छोटा सा फार्म बनाया, सीढ़ी बनाई, आदर्श उपस्थित किया, जिससे लोगों के सामने देवत्व घिसटता हुआ चला गया और वे दिन भी आए, जबकि दुर्योधन की आसुरी सभ्यता का निवारण हो गया, समाधान हो गया। कभी और भी ऐसे ही हुआ था। सारे इतिहास में तो यही पढ़ता रहता हूँ। अठारह पुराणों का अनुवाद मैंने किया है और इतिहास भी पढ़ा है। दो वर्ष पहले मैंने इतिहास को ज्यादा गहराई और ध्यान से पढ़ा है। 'भारतीय संस्कृति का समस्त विश्व को अजस्र अनुदान' नामक बड़ा ग्रंथ मैंने लिखा है। आपने पढ़ा होगा, उसमें मैंने हिंदुस्तान की सारी की सारी हिस्ट्री लिखी है। सारी दुनिया को निहाल कर देने की हिस्ट्री। किससे निहाल कर दिया था? बेटे, सारी दुनिया को धन दिया था, विद्या

दी थी, ज्ञान दिया था। सारी दुनिया में भारतीयों का वर्चस्व छा गया था और उनको जगद्गुरु माना गया था, देवता माना गया था।

मित्रो! मैंने जो पुस्तक लिखी है 'भारतीय संस्कृति का समस्त विश्व को अजस्र अनुदान'। उसमें मैंने यह लिखा है कि भारतीय लोगों ने किस कदर त्याग और बलिदान किए हैं और एक से बढ़कर एक कैसे-कैसे नमूने खड़े किए हैं ? बलिदानों का जखीरा लगा दिया है। भारतीय सभ्यता को अपने अनुदान देने वाले लोगों का जब मैं इतिहास पढ़ता हूँ, तो आँखों में से आँसू टपक पड़ते हैं। उनमें से एक थे, कुमारजीव, जो हिंदुस्तान से रवाना हुए और चीन पहुँच गए। जहाँ की न वे भाषा जानते थे और न कुछ जानते थे। "चीन नाम का देश है, जिसमें जाकर बौद्ध धर्म का प्रसार करेंगे।" यह सोचकर वे अकेले ही रेगिस्तानों को पार करते हुए चले गए। उन भयंकर रेगिस्तानों को जहाँ तीस-तीस दिनों तक पानी की एक बूँद भी नहीं मिलती थी। पेड़ की

छाया तक नहीं है, केवल रेगिस्तान ही रेगिस्तान भरा पड़ा है। अपनी थैली में थोड़ा सा पानी लेकर वे रवाना हो गए। कौन? कुमारजीव। वे चाइना में रह गए। चाइना में कौन था उनका? न कोई बेटा था, न मित्र था, न कोई शिष्य था उनका। वहाँ जाकर के उन्होंने चायनीज भाषा सीखी और सीखने के बाद में बौद्ध धर्मग्रंथों का अनुवाद करके वहाँ रखा। सारे के सारे चाइना को बौद्ध बनाने का श्रेय कुमारजीव जैसे बुद्ध के अनुयायियों को था।

गुरुजी! यह कैसे हो गया? बेटे, जादू से। जादू से कैसे हो गया? हमको भी सिखा दीजिए। बेटे, जिस जादू से दुनिया में बड़े-बड़े काम हुए हैं और अध्यात्म का प्रणयन हुआ है, उसका नाम है, त्याग और बलिदान। नहीं महाराज जी। त्याग-बलिदान का नहीं, हमको तो बता दीजिए मंत्र। मंत्र कैसा होता है? अहा! इसी मंत्र के चक्कर में फिर रहा है धूर्त। अच्छा महाराज जी! बता दीजिए जादू। जादू बता दें तेरा सिर। मित्रो! क्या हुआ? सारी की

सारी पुस्तकों में मैंने लिखा है कि भारत के गौरव को ऊँचा उठाने के लिए, सारे विश्व का कायाकल्प कर डालने के लिए, जो आधारभूत मंत्र था, वह था त्याग और बलिदान। त्याग और बलिदान की आवश्यकता महात्मा बुद्ध को पड़ी कि जिससे न केवल हिंदुस्तान, वरन सारे के सारे विश्व को सुसंस्कृत बनाया जाए, फिर से सुसंस्कृत बनाया जाए। इसके लिए उन्हें अपील करनी पड़ी कि जो हमारे सबसे प्यारे हों, जो हमारे हितैषी हों, जो हमारी आज्ञा का पालन करने वाले हों, जो हमसे यह कहते हों कि बुद्ध हमारा है, तो वह त्याग करके दिखाएँ। यही सीधा-सरल मार्ग है।

मित्रो! क्या करना पड़ेगा? भारतीय सभ्यता और संस्कृति को जिंदा रखने के लिए बुद्ध ने जो कदम उठाए, उसने अपने-अपने मित्रों और शिष्यों से कहा कि आप आएँ और हमारे पीछे-पीछे चलें। किस तरह चलें? आप हमारी बात मानते हैं, तो हमारे रास्ते पर चलें और हमारा अनुकरण करें। क्या

रास्ता है आपका? हमारा रास्ता है, त्याग और बलिदान का। किसने त्याग और बलिदान के रास्ते पर कदम बढ़ाए? एक लाख शिष्य और सवा लाख शिष्याओं ने, उन सारे के सारे लोगों ने कहा कि हम आपके रास्ते पर चलेंगे। आपने जिस काम के लिए अवतार लिया है, उस काम में हम आपका सहयोग करेंगे और सहायता करेंगे। दो लाख आदमियों को लेकर बुद्ध ने न केवल हिंदुस्तान, वरन समूचे एशिया, न केवल एशिया, वरन सारे के सारे महाद्वीपों में दैवीय सभ्यता का प्रसार किया। उस जमाने में सात महाद्वीप माने जाते थे। अब तो हमने पाँच कर लिए हैं। सारे महाद्वीपों में उन लोगों ने न जाने क्या से क्या काम करने शुरू कर दिए, जिससे वे जगद्गुरु कहलाने के अधिकारी हुए।

यह क्या किया बुद्ध ने? बेटे, बुद्ध ने यही किया। दैवीय सभ्यता का प्रसार इसी से हुआ है। तो क्या बुद्ध ने बड़े व्याख्यान दिए थे? हाँ बेटे, बुद्ध ने बड़े व्याख्यान दिए थे, लेकिन व्याख्यान देने के

साथ-साथ में उसके नमूने भी पेश किए गए थे। क्या नमूना पेश किया? उनका बेटा राहुल आया और बोला, पिताजी! हम आपके अंश-वंश से पैदा हुए हैं। हाँ बेटे, तुम हमारे अंश-वंश से पैदा हुए हो तो तुम्हें हमारी वंश-परंपरा की रक्षा करनी चाहिए। वंश-परंपरा की रक्षा कैसे होती है? पंडित जी से पूछा, तो वे बोले, बस जौ का पिंड बना लो और उस पर धूप-दीप, फूल लगा दो और 'तर्पयामि' करके पिंड को गंगा जी में चढ़ा दो। बस, वंश का उद्धार हो जाएगा। तो क्या पिताजी। ऐसे उद्धार होगा? नहीं बेटे, ऐसे उद्धार नहीं होगा। कैसे होगा? जिस रास्ते पर हम चले हैं, उस रास्ते पर तू भी चल।

राहुल ने कहा, अच्छा पिता जी! कोई और रास्ता बताइए? बुद्ध ने कहा, नहीं बेटे, हम जिस रास्ते पर चले हैं, उससे अच्छा कोई रास्ता नहीं हो सकता है। अगर रहा होता, तो हम भी उस पर चल दिए होते। यही सबसे अच्छा रास्ता है। तुझे यही करना पड़ेगा। अगर तू हमारा बेटा है और यह

कहता है कि हम आपका वंश चलाएँगे, तो हमारे रास्ते पर चल। राहुल तैयार हो गया। वह सारी जिंदगी भर अपने पिता के कदमों पर चलता रहा और न जाने कहाँ से कहाँ चला गया। वह वर्मा गया। सारे के सारे विश्व में एक सिरे से दूसरे सिरे तक भटकता फिरा और अपने पिता के कामों का और उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने के लिए त्याग-बलिदान की झड़ी लगाता रहा।

मित्रो! बेटा कैसा होना चाहिए? राहुल की तरह से होना चाहिए। बेटा ऐसा नहीं होना चाहिए कि बाप मरेगा तो उसकी जायदाद हमको मिलनी चाहिए और जो खेत है, वह हमको मिलना चाहिए। बाप का पैसा हमको मिलना चाहिए। बाप जिंदा है, तो हिस्सा मिलना चाहिए। नहीं, ऐसे बेटे नहीं हो सकते। श्रवणकुमार के तरीके से बेटे होते हैं और राहुल के तरीके से बेटे होते हैं और बेटियाँ कैसी होती हैं? बेटियाँ संघमित्रा के तरीके से होती हैं। संघमित्रा सम्राट अशोक की बेटी थी। उसने कहा, पिता जी आपने

संन्यास ले लिया? हाँ। तो फिर हमारे लिए हुक्म दीजिए कि हमको क्या करना चाहिए?

मित्रो! संघमित्रा जो थी, उसने कहा, पिता जी क्या करना पड़ेगा? बेटी, हमारे रास्ते पर चलना पड़ेगा। सम्राट अशोक की बेटी संघमित्रा निकल पड़ी और उसने जितने बुद्ध ने विहार बनाए थे, उससे ज्यादा विहार बनाकर दिखा दिए। महिलाओं के क्रिया-कलाप, महिलाओं के संगठन, महिलाओं के विहार संघमित्रा ने ढेर सारे बना दिए। यह सब हमारी किताब में वर्णन किया गया है; उसका मैं हवाला दे रहा था। कितने ज्यादा बुद्ध के विहार थे और कितने महिलाओं के लिए? यह कैसे हो गया? बेटे, इस तरीके की परंपराओं से हो गया। कहाँ से कहाँ तक हुआ? बेटे, जहाँ कहीं भी अनीति के विरुद्ध संघर्ष करने की जरूरत पड़ी होगी अथवा धर्म की स्थापना करने की जरूरत पड़ी होगी और जब ठोस कदम उठाने की जरूरत पड़ी होगी, तब जैसे कि आज है। पोला कदम जब तक उठाना है,

तब तक तो मीटिंग करेंगे, वार्षिकोत्सव करेंगे, रामायण सम्मेलन करेंगे। ठीक है बेटे, ये पोला कदम हो सकता है, पर यह ठोस कदम नहीं हो सकता। ठोस कदम यह हो सकता है कि हमें लोगों के, जनसाधारण के सामने त्याग और बलिदान की परंपराएँ प्रस्तुत करनी चाहिए, ताकि लोगों का मुँह यह कहने के लिए बंद हो जाए कि ये कहने-सुनने की बातें हैं। ये दूसरों को उपदेश देने की बातें हैं। ये बातें काम नहीं आ सकतीं और कोई आदमी इन्हें जीवन में करके नहीं दिखा सकता। दूसरों को कह सकता है कि आपको त्यागी होना चाहिए, ब्रह्मचारी रहना चाहिए, परोपकारी होना चाहिए। आप और हम कह सकते हैं, लेकिन जब स्वयं करने का मौका आएगा, तब हम नहीं कर सकते। यही कारण है कि वक्ताओं का, उपदेशकों का कहीं कोई प्रभाव पड़ता नहीं दिखाई देता।

मित्रो! चिंता करने की कोई बात नहीं है। आप अपने से ही शुरुआत कीजिए, नमूना बनिए,

साँचा बनिए। हमारी परंपरा स्वयं से शुरुआत करने की रही है। जहाँ कहीं भी हम देखते हैं, अपने से ही शुरुआत देखते हैं। विश्वामित्र और हरिश्चंद्र दोनों आपस में घनिष्ठ थे। इतने घनिष्ठ थे कि गुरु-शिष्य का प्रेम जो राजा और विश्वामित्र में था और किसी में नहीं देखा गया। विश्वामित्र एक बड़ा काम करने वाले थे, नई दुनिया बनाने वाले थे। जब हम पढ़ते हैं, तो उसमें नई सृष्टि लिखा हुआ है। वे नई सृष्टि बना रहे थे। मैं समझता हूँ नई सृष्टि तो क्या बना रहे होंगे, लेकिन नया जमाना ला रहे होंगे। विश्वामित्र ने राजा हरिश्चंद्र से कहा, तू हमारा मित्र है, दोस्त है। उनने कहा, हाँ। तो फिर हमारे साथ-साथ चल, हमारे काम आ। राजा हरिश्चंद्र ने कहा, हम आपके साथ-साथ चलेंगे और आपके काम आएँगे। तो फिर काम आ, चल हमारे साथ।

मित्रो! विश्वामित्र को पैसे की जरूरत पड़ी होगी, तो उन्होंने हरिश्चंद्र का राज्य माँगा होगा, दूसरी चीजें माँगी होंगी और आखिर में जहाँ मौका आ गया

होगा, तो भौतिक साधनों के लिए राजा हरिश्चंद्र ने अपने आप को नीलाम कर दिया होगा। अपनी बीबी-बच्चे को नीलाम कर दिया होगा। यह क्या चीज है? त्याग और बलिदान है। इसको हम भूल नहीं सकते। विश्वामित्र ने हरिश्चंद्र को ही दोस्त क्यों बनाया? इससे कम में काम नहीं चल सकता था? अभी भी हजारों गांधियों को पैदा करने की ताकत हरिश्चंद्र में है। गांधी जी ने बचपन में हरिश्चंद्र का ड्रामा देखा और ड्रामा देखकर उन्होंने कहा, मैं हरिश्चंद्र होकर जिऊँगा। वे वास्तव में हरिश्चंद्र होकर के जिए। हरिश्चंद्र ने एक हरिश्चंद्र तो अभी-अभी पैदा किया है हमारे सामने और असंख्य हरिश्चंद्र जाने कितने पैदा कर गए। कैसे हो गए? बेटे और कोई तरीका नहीं है अपने आप को त्याग की बलिवेदी पर समर्पित करने के अलावा। अगर हमारे व्यक्तिगत जीवन में लोकहित के लिए, परमार्थ के लिए कहीं त्याग की परंपरा नहीं है, तो फिर कहने भर की बातें हैं, बरगलाने भर की बातें हैं और आपको छलने एवं जनता को बरगलाने की

बातें हैं। नया युग लाने के लिए तो हमें फिर वहीं से आरंभ करना होगा, जहाँ हमारे ऊपर यह बात लागू होती है कि त्याग और बलिदान का प्रश्न आए, तो हम कहाँ होते हैं ? बगलें झाँकते हैं या आगे बढ़-चढ़कर लग जाते हैं।

मित्रो! हमारी संस्कृति में त्याग-बलिदान की परंपराएँ आदिकाल से रही हैं, चाहे बुद्ध हों या हरिश्चंद्र, कोई भी रहा हो। त्याग-बलिदान की परंपराएँ गांधी जी के आश्रम में भी थीं। गाँधी जी के आश्रम में जब 'नमक-सत्याग्रह' शुरू हुआ तो लोगों ने कहा कि आप चुपचाप बैठे रहिए और लोगों को हुक्म दीजिए। सब लोग जेल जा सकते हैं, नमक बना सकते हैं, आप शांति से बैठे रहिए, बाकी लोग ये सब काम करेंगे। गांधी जी ने कहा, ऐसा नहीं हो सकता। जो लोग साबरमती आश्रम में रहते हैं, उन आश्रमवासियों का सबसे पहले नंबर है, बाकी लोगों का पीछे नंबर है। उन्होंने सबसे पहले अपना नाम लिखाया। गांधी जी के आश्रम में जो उन्नीस आदमी थे, उनको लेकर

और आश्रम में ताला डालकर गांधी जी नमक बनाने के लिए रवाना हो गए और वहाँ से जेल चले गए। उनके जेल जाने के बाद जो आग फैली, तो गांधी जी के बच्चे, जनसेवक सभी ने कहा कि हमें भी जेल जाना चाहिए। यह प्रभाव व्याख्यानों का था? नहीं, त्याग के लिए गांधी जी का स्वयं को प्रस्तुत करने का था। बिना कोई व्याख्यान दिए, बिना कोई कथा कहे, बिना कोई प्रवचन दिए, बिना कोई सम्मेलन बुलाए कितने सारे आदमी जेल चले गए। गांधी जी के उस साहस को, त्याग को देखकर लोगों ने समझ लिया कि इस आदमी की कथनी और करनी के बारे में दो राय नहीं है। इसकी कथनी और करनी एक है।

सिख धर्म भी इसी का साक्षी

मित्रो! यही परंपरा बनी रही है और बनी रहेगी। सारे का सारा इतिहास, पुराणों का इतिहास, धर्मशास्त्रों का इतिहास, अमुक का इतिहास जब हम देखते हैं, तो दूसरा कोई तरीका दिखाई नहीं पड़ता। यवनों के विरुद्ध जब सिख धर्म बनाया गया और

इस बात की जरूरत पड़ी कि लोगों को हिंदू धर्म की रक्षा के लिए सिपाहियों के तरीके से, सैनिकों के तरीके से तनकर खड़ा हो जाना चाहिए और अपनी जान को जोखिम में डालना चाहिए। यह बहादुरी जब गुरु गोविंद सिंह पैदा करने वाले थे, तब उन्होंने लोगों से पूछा कि इसका कौन सा तरीका हो सकता है ? लोगों में बहादुरी कैसे भरी जा सकती है ? अगर यह उपदेश से हो जाए कि उससे सब लोग सूली पर चढ़ जाएँ, सब मारे जाएँ और हम सुरक्षित बैठे रहेंगे, ऐसा नहीं हो सकता। गुरु गोविंद सिंह ने कहा, "पहला नंबर हमारा है।" उन्होंने जान-बूझकर ऐसी परिस्थितियाँ पैदा कीं, ताकि लोगों में जोश और जीवन पैदा हो सके।

मित्रो! गुरु गोविंद सिंह के दो बच्चे दीवार में चिनवा दिए गए। दो बच्चे युद्ध में थे। एक बच्चा लड़ाई के मैदान में जब मारा गया तो दूसरा बच्चा, जो उसके साथ-साथ लड़ रहा था, भागकर आया और अपने पिता जी को खबर सुनाई कि हमारे भाईसाहब तो

लड़ाई में मारे गए। गुरु गोविंद सिंह ने कहा, मारे गए, तो बेटा फिर तू कैसे आ गया? उस वक्त बच्चे से जवाब नहीं बन पड़ा। वह बेचारा समझ नहीं सका कि पिता जी का क्या इशारा है? पिता जी का यह इशारा था कि एक भाई लड़ाई में मारा गया, तुझे भी मरना चाहिए था। वह इशारा समझ गया, लेकिन उनके आगे जवाब क्या दे सकता था? उसने कहा, पिताजी! मुझे प्यास लगी थी। पानी पीने के लिए और आपको खबर सुनाने एवं सुस्ताने के लिए मैं आया था। ठीक है बेटा! जितनी देर सुस्ताना था सुस्ता लिया। हाँ और देख प्यासा है, तो बेटे बैरी के खून से अपनी प्यास बुझाना। चल यहाँ से और उसे भगा दिया।

मित्रो! वह चलता हुआ चला गया। मैं यह क्या कह रहा हूँ? ये अध्यात्म की बातें कह रहा हूँ, देव-परंपराओं की बातें कह रहा हूँ और ये बात कह रहा हूँ कि अगर दुनिया में कोई बड़े काम हुए हैं या बड़े काम हो सकते हैं, तो इससे कम में नहीं हो सकते और न इससे अधिक में हो सकते हैं।

तमाशों से उबरें, सच्चा अध्यात्म जानें

भाइयो! अपना ये कुटुंब हमने बहुत दिनों पहले बनाया था। उस समय हमारे पास बच्चे ही बच्चे थे। बच्चों के बारे में जो नीति अख्तियार करनी चाहिए, वो ही नीति हमारी थी। बच्चों के लिए, उन्हें देने के लिए क्या हो सकता है? पिताजी गुब्बारा देना, टॉफी देना, लेमनचूस देना। पिताजी चाबी की रेलगाड़ी लाना। हम बरफ की कुल्फी खाएँगे आदि सारी की सारी माँगें, फरमाइशें-डिमांड बच्चे करते रहते हैं। ये कौन हैं? बच्चे। अध्यात्म क्षेत्र में फरमाइश करने वाले ये कौन हैं? बिलकुल बच्चे हैं, बालक हैं। इनको इसी बात की फिक्र पड़ी रहती है कि हमको दीजिए, हमको दीजिए। इसलिए ये बालक हैं। बेटे, आज से तीस साल पहले हमने बिलकुल बालकों का समूह जमा किया था और लोगों से कहा था कि हमारे पास जो कुछ है, आप ले जाइए। तब लोगों ने कहा था, पिता जी! आपके पास क्या है? गुब्बारे हैं। तो हमको दे दीजिए। बस एक गुब्बारा पेटी से निकाला, फूँक

मारकर हवा भर दी और कहा ये रहा तुम्हारा गुब्बारा। एक ने कहा, पिताजी! आप तो सबको बेटा देते हैं? हाँ बेटे, हमारी पेटी में बहुत सी चीजें हैं। ये देख टॉफी है, ये लेमनचूस है। ये नौकरी में तरक्की है। ये दमे की बीमारी का इलाज है।

ये क्या है? ये बेटे सब तमाशे हैं, खेल-खिलौने हैं। ये सब बहुत दिनों पहले थे। अब हमारी दुकान बड़ी हो गई है और अब आपसे दूसरे तरीके से उम्मीद करता हूँ। अब आप गुब्बारे माँगते हैं, तो मैं नाराज होता हूँ और आप से कहता हूँ कि अब आप तीस साल के हो गए हैं। आपको शरम नहीं आती, जो गुब्बारे माँगने आए हैं। तो पिताजी! मुझे क्या करना चाहिए? बेटे अब हम बुड्ढे हो गए हैं और तू कमाने लगा है। तुझे साढ़े छह सौ रुपए मिलते हैं। देख हम ये फटा हुआ पाजामा पहनते हैं, हमारे लिए नया पाजामा ला दे। देख हम बुड्ढे हो गए हैं और हमको कम दिखाई पड़ता है। डॉक्टर ने कहा है कि आँखों को टेस्ट कराना और चश्मा

खरीद लेना। डॉक्टर ने बताया था कि अट्ठाईस रुपए का चश्मा आएगा। बेटे, निकाल अट्ठाईस रुपए। बेटे, निकाल अट्ठाईस और हमारी आँखों का टेस्ट कराकर ला। चश्मा खरीदकर ला। अरे! पिताजी, आपने तो 'टर्न' ही बदल दिया। हाँ बेटे, बदल दिया। पहले हम गुब्बारे दिया करते थे, अब हम चश्मे के लिए पैसे माँगते हैं। ये क्या बात हो गई? ये तो बिलकुल उलटा हो गया। हाँ बेटे हमारा ही क्या उलटा हो गया, तेरा भी उलटा हो गया। जब तू गोदी में था, तब नंगा फिरता था और अब तो तू कच्छा भी पहनता है। पैंट भी पहनता है। तूने बदल दिया कि नहीं? हाँ महाराज जी! मैंने तो बदल दिया। बेटे तू बदल गया, तो हम भी बदल गए।

मित्रो! अब हमारा कुटुंब जवान हो गया है। हम जवान आदमियों से अपेक्षा करते हैं देने की। अब हम माँगने की अपेक्षा करते हैं और हमारा हक है कि हम आपसे माँगें। अब आप से माँगा गया है और माँगना चाहिए। बेटे, जहाँ कहीं भी वास्तविकता का

उदय हुआ है, जहाँ कहीं भी जवानी आई है, जहाँ कहीं भी प्रौढ़ता, जवानी है, जहाँ कहीं भी विवेकशीलता आई है, वहीं परंपरा पलट जाती है। अब हम आपसे लेने की परंपरा आरंभ करते हैं, क्योंकि आप अब जवान हो गए हैं। खासतौर से इस जमाने में, जिसमें हम और आप जिंदा हैं। यह जीवनभर का सवाल है। आज मनुष्य जाति जहाँ चली जा रही है, आदमी का चिंतन जिस गहराई के गड्ढे में धँसता हुआ चला जा रहा है, ये ठीक वही परंपराएँ हैं, जो कि रावण के जमाने में आई थीं। इसमें वह मनुष्यों को मारकर हड्डियों के ढेर लगा देता था। आज हड्डियों के ढेर तो नहीं लगाए जाते, पर हम हड्डियों के ढेर को चलते-फिरते आदमियों के रूप में देख सकते हैं। हड्डियाँ जो जिंदा तो हैं, पर जिनको चूस लिया गया है। मैं समझता हूँ कि प्राचीनकाल में ज्यादा भले आदमी थे और शरीफ आदमी थे। कौन से आदमी ? वे जो मारकर डाल देते थे, उनको मैं ज्यादा पसंद करता हूँ, क्योंकि तब आदमी को मारकर खत्म कर

देते थे, लेकिन आज का तरीका बहुत गंदा है। आज तो आप रुला-रुलाकर मारते हैं, कोंच-कोंचकर मारते हैं, तरसा-तरसाकर मारते हैं। ये गंदा तरीका है। रावण के जमाने में तब भी अच्छा तरीका था, सीधे खत्म कर देने का।

आज की विडंबना

मित्रो! आज हम क्या करते हैं? आज हम अपनी स्वार्थपरता के कारण हर एक को चूसते हैं। किसको चूसते हैं? जो कोई भी हमारे पास आता है, हम उसको चूस जाते हैं, उसे जिंदा नहीं छोड़ना चाहते, केवल उसकी हड्डियाँ रह जाती हैं। उदाहरण के लिए, जैसे हमारी बीवी। हमने अपनी बीवी को चूस लिया है। अब वह सिर्फ हड्डियों का ढाँचा मात्र है। कैसे हुआ? बेटे, जब वह अपने बाप के घर से यहाँ आई थी, तो उम्मीद लेकर आई थी कि हमारा स्वास्थ्य अच्छा बनाया जाएगा। हमको पढ़ाया जाएगा, शिक्षित किया जाएगा और यह उम्मीद लेकर आई थी कि बाप हमको जितना स्नेह देता है, जितनी

हमें सुविधा देता है, हमारा पति और भी अधिक प्यार और सुविधा देगा। लेकिन हमने उसको चूस लिया। हर साल बच्चे पैदा किए। कामवासना-पूर्ति के लिए हमने उसके पेट में से पाँच बच्चे निकाल दिए। पाँच बेटियाँ हो गई, अभी एक बेटा और होना चाहिए। अब वह बेचारी लाश रह गई है। बार-बार हमारे पास आती रहती है और कहती रहती है कि हमारे पेट में दरद होता है, कमर में दरद होता है और हमारे सिर में दरद होता है। मैं कहता हूँ कि बेटी तू जिंदा है, भगवान को बहुत धन्यवाद दे कि ये पिशाच तुझे अभी तक जिंदा छोड़े हुए हैं। इसका वश चले तो तुझे खाकर तेरी जिंदगी खत्म कर दे, चांडाल कहीं का। इसे तो अभी और बच्चे चाहिए।

मित्रो! उस बेचारी के पास न मांस है,न रक्त है शरीर में और न उसके पास जान है। उसके पास कुछ भी नहीं है। न जाने किस तरीके से साँस ले रही है और कैसे दिन बिता रही है? नहीं साहब! मेरा तो वंश चलना चाहिए। इस राक्षस का, दुष्ट का

वंश चलना चाहिए। ये क्या है? ये बेटे, कसाईपन है। आज हर आदमी कसाई होता हुआ चला जा रहा है। आज हम देखते हैं कि न हमको अपनी बीवी के प्रति दया है, न अपने माँ-बाप के प्रति दया है, न अपने बच्चों के प्रति दया है। रोज बच्चे पैदा कर लेते हैं। इस बात की लिहाज-शरम नहीं है कि आखिर इनको पढ़ाएगा कौन? शिक्षा के लिए पैसा कहाँ से आएगा? इनको खेलने के लिए रेल कहाँ से आएगी? हमको तो बस काम-वासना से प्यार है। हम तो चौरासी बच्चे पैदा करेंगे। आज आदमी चांडाल होता हुआ चला जा रहा है।

मित्रो! आज हमें किसी के ऊपर दया नहीं है। हमारे पास कहीं भी धर्म नहीं है। हमारे पास कहीं भी ईमान नहीं है। आज आदमी इतना खुदगर्ज होता हुआ चला जा रहा है कि मुझको ये मालूम पड़ता है कि हमारी खुदगर्जी का पेट इतना बढ़ता हुआ चला जा रहा है कि इनसानों से हमारा गुजारा नहीं हो सकता। अब जो कोई भी सामने आएगा, हम उसको

अपनी खुदगर्जी का शिकार बनाएँगे। किसको बनाएँगे ? देवी-देवताओं में से जो भी हमारे चक्कर में फँसेगा, हम उसको खत्म करके रहेंगे। देवताओं के ईमान को खत्म करके उन्हे बेईमान बनाकर रहेंगे। संतोषी माता हमारे चक्कर में आ जाएँगी, तो उनको बदनाम करके रहेंगे। हम उन्हें दो बकरे खिलाएँगे और ये कहेंगे कि हमको डकैती में फायदा करा दो। हम उसको बदनाम कराकर रहेंगे। हर एक को हम बदनाम कराएँगे। जो कोई भी हमारा गुरु होगा, हम उसको बदनाम कराकर रहेंगे। हम कहेंगे कि हमारा गुरु ऐसा है, जिसको न इंसाफ की जरूरत है, न उचित-अनुचित की जरूरत है। जो कोई भी हाथ जोड़ता है, जो कोई भी सवा रुपए देता है, उसी की मनोकामना पूरी कर देता है।

दुर्मतिजन्य दुर्गति से हुआ आदमी का अवमूल्यन

बेटे, हम कहाँ जा रहे हैं और न जाने क्या हो रहा है ? हम जिस जमाने में रह रहे हैं, उसमें

आदमी न जाने क्या होने जा रहा है ? अगर आदमी इसी तरीके से बना रहा, तो उसका परिणाम क्या होगा ? अभी जितनी ज्यादा मुसीबतें आई हैं, आगे उससे भी ज्यादा आएँगी। इससे तो अच्छा होता अगर युद्ध हो जाता और दुनिया खत्म हो जाती। लेकिन यदि हमारी स्वार्थपरता जिंदा रही और आज हम पर जैसी हावी होती चली जा रही है। आदमी, जैसा निष्ठुर, जैसा नीच, जैसा स्वार्थी होता हुआ चला जा रहा है, अगर यही क्रम जारी रहा तो मैं आपसे कह देता हूँ कि आदमी-आदमी को मार करके खाएगा। पकाकर खाएगा कि नहीं, मैं नहीं जानता, लेकिन आदमी-आदमी से डरने लगेगा। अभी तक हमको भूत का डर लगता था, साँप का डर लगता था, चोरों का डर लगता था, लेकिन अब हमको मनुष्यों का डर लगेगा। इतना तो अभी ही हो गया है कि आदमी की कीमत उसके बिस्तर से कम हो गई है। आज आप बिस्तर लेकर धर्मशाला में जाते हैं, तो धर्मशाला वाला कहता है, आइए

साहब! कमरा खाली है, लेकिन अगर आपके पास बिस्तर नहीं है, अटैची नहीं है, आप एक थैला लेकर जाते हैं और कहते हैं कि साहब! धर्मशाला में ठहरने की जगह है कि नहीं? धर्मशाला वाला कहता है कि आपके साथ और कौन-कौन है? आपका सामान कहाँ है?

अरे भाई! गरमी के दिन हैं, सामान की क्या जरूरत है? अरे साहब! आजकल बड़ी भीड़ है। सारी जगह भरी हुई है। कहीं जगह नहीं है। आप ऐसा कीजिए, चौथे नंबर की धर्मशाला है, वहाँ चले जाइए। वहाँ जाते हैं, तो वह कहता है कि अरे साहब! आप अब आए हैं? आपसे पहले पच्चीस आदमियों को मना कर दिया है कि यहाँ जगह नहीं है। ऐसा क्यों होता है। क्यों मना करते हैं? यह आदमी का मूल्य आदमी की प्रामाणिकता, आदमी की इज्जत को बताता है कि आदमी की कीमत से धर्मशाला में बिस्तर की कीमत ज्यादा है। आज आदमी का मूल्य इतना गिर गया है। कल आदमी और भी भयंकर होने वाला है।

मित्रो! आदमी जब कल और भयंकर हो जाएगा, तब वह भूत बन जाएगा, पिशाच बन जाएगा। तब आदमी को देखकर आदमी भागेगा और कहेगा, "आदमी आ गया, चलो भागो यहाँ से। वह देखो आदमी खड़ा है।" कल यही परिस्थितियाँ पैदा होने वाली हैं। यह हमारे मन का घिनौनापन है। अभी हमारे ऊपर स्वार्थ छाया हुआ है। हम समाज के किसी काम में भाग लेना नहीं चाहते। हम समाज के लिए कोई सेवा करना चाहते हैं, तो पहले यह देखते हैं कि सेवा के बहाने हमारा उल्लू सीधा होगा कि नहीं होगा। हमारा उल्लू सीधा होता है, तो बेटे हम संस्था में जाते हैं, कमेटी में जाते हैं, प्रेसीडेंट बनते हैं, मीटिंग में जाते हैं, अगर उल्लू सीधा नहीं होता है, तो कहते हैं कि समाज के जीवन से हमारा कोई लगाव नहीं है, कोई संबंध नहीं है। आज की बात समाप्त।

॥ ॐ शांतिः ॥

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)